3.3.3(3)

XXIII

'चिन्तन' अन्तरराष्ट्रीय रिसर्च जर्नल (ISSN : 2229-7227)
International Refereed वर्ष 9, अंक 34 (पृ.सं. 539-541)
Impact Factor : 4.012 विक्रमी सम्वत्: 2077 (अप्रैल-जून 2019)

श्रीमद्भगवद्गीता में पर्यावरणचेतना

डॉ० विदुषा
राजकीय महिला महाविद्यालय
करनाल (हरियाणा)

शोध-आलेख सार

श्रीमद्भगवद्गीता सृष्टिचक्र के मूल स्वरूप को मानवमात्र के समक्ष उपस्थापित कर उसे समझाती है कि श्रेय अथवा प्रेय मार्ग का चयन करना स्वयं उसके हाथ में है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के द्वारा युद्ध से विरत होने पर उसकी मानसिकता को कर्त्तव्य के प्रति उद्बोधित किया केवल निर्देश द्वारा थोपा नहीं। यही भावना अथवा सन्देश समस्त मानवजाति के प्रति भी है। निर्णय स्वयं मनुष्य के हाथ में हैं।

मुख्य-शब्द : श्रीमद्भगवद्गीता, ज्ञान-कर्म, अद्वैतानुभूति, पर्यावरणचेतना ।

जगद्गुरु भगवान् श्रीकृष्ण का संसार को अमूल्य उपहार है गीता। मानव को भीतर-बाहर से पूर्णतया शुद्ध करके जगत्स्रष्टा के समकक्ष खड़ा कर अद्वैतानुभूति का रसपान कराने वाली गङ्गा है गीता। मानव का समग्र कल्याण, जीवन के प्रत्येक पक्ष को सन्तुलितरीत्या समायोजित करने में निहित है। गीता के अनुसार जीवन में ज्ञान-कर्म, एवं भक्ति के समन्वय के साथ परमतत्त्वोपलब्धि के मार्ग के पथिक को योगक्षेम की व्यवस्था के साथ जीवन के प्रत्येक कर्म को युक्तिसंगत रीति से करना अपेक्षित है। इसे ही ईशोपनिषद् में विद्या एवं अविद्या को सन्तुलन कहा गया है।

'परितः आवरणम् इति पर्यावरणम्' हमारे चारों ओर विद्यमान भौतिक, रासायनिक एवं जैविक तत्त्वों की परत ही पर्यावरण कहलाती है। समस्त जीवजगत् के योगक्षेम हेतु इसकी शुद्धता अपेक्षित होती है। एक बार एक वैज्ञानिक ने विचार किया कि लम्बी-लम्बी यात्राओं में बहुत थकान होती है तो क्यों न ऐसा हो कि यात्रा के इच्छुक व्यक्ति को पृथ्वी से एक निश्चित दूरी की ऊँचाई तक ले जाया जाए और पृथ्वी के अपनी कक्षा में घूमते रहते हुए जब उस व्यक्ति का गन्तव्य स्थान आ जाए तो उसे पृथ्वी पर उतार दिया जाए। परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है क्योंकि मनुष्य पृथ्वी के जिस भाग में है उसके पर्यावरण की परतों से बँधा है अत एव वह उसी स्थान पर ही वापिस उतरेगा कि जहाँ से वह ऊपर गया था।

पृथ्वी-जल-अग्नि-वायु एवं आकाश इन पञ्चतत्त्वों से समस्त जगत् की सृष्टि होती है। इनके शान्त एवं संतुलित बने रहने पर आधिभौतिक तापों की निवृत्ति होती है। प्रत्येक मनुष्य को धर्मार्थकाममोक्ष रूप पुरुषार्थचतुष्टय की सिद्धि अपेक्षित है। देव-पितृ-एवं आचार्य ऋण के अतिरिक्त मानव को प्रकृति ऋण भी चुकाना होता है। सृष्टि में घटित होने वाले प्रत्येक क्रियाकलाप के परस्पर सम्बद्ध होने के कारण प्रति जड एवं चेतन इकाई की अपनी स्वतन्त्र महत्ता है क्योंकि हमारे परिवेश में घटित होने वाली प्रत्येक स्थूल एवं सूक्ष्मक्रिया सृष्टिचक्र का अंग बनकर जीवन को प्रभावित करती है। श्रीकृष्णचरित का प्रत्येक अंश मानवता को संतुलित, समरस एवं सदाचारपूर्ण जीवन का अध्याय पढ़ाता है। श्रीकृष्ण के द्वारा राक्षसों का संहार वस्तुतः अविद्यावरण अथवा वैचारिक प्रदूषण अथवा मानसिक कलुषता के विनाश का प्रतीक है। कालियदमन जलशुद्धि के द्वारा पर्यावरणशुद्धि हेतु है। वनाग्नि का पान वन्य वनस्पति एवं जीवनसंरक्षण हेतु है। इसी प्रकार गोवर्धनपूजा गोवंश की अभिवृद्धि के निमित्त